शरदचन्द्र पाठक

शिक्षा : दशा और दिशा

स्वाधीनता के उपरान्त तत्काल भारत में जिस शिक्षा प्रणाली को अपनाया गया वह पूर्णत: अंग्रेजों द्वारा निर्मित थी और उन्हीं के हितों को ध्यान में रखते हुए बनायी गयी थी। भारत के जागरूक और प्रबुद्ध नेताओं ने इस कमी को ध्यान में भी रखा था। यही कारण है कि स्वतंत्रता के पश्चात् अनेक आयोगों का गठन हुआ और उनकी सिफारिशों को यथासम्भव लागू करने की चेष्टा भी हुई। हमारी शिक्षा पर अव्यावहारिक अथवा बहुत कुछ सैद्धान्तिक होने का आरोप भी लगाया जाता रहा। छात्रों के असंतोष तथा उनकी अनुशासनहीनता के लिए भी हम प्राय: शिक्षा प्रणाली को दोषी कहकर अपने को सारी जिम्मेदारियों से मुक्त कर लिया करते थे, अस्सी के दशक की शिक्षा में अनेक परिवर्तन घटित हुए। परिणामत: शिक्षा की अवधारणा और स्वरूप में बुनियादी परिवर्तन हुए। अव्यावहारिक का आरोप अब बहुत कुछ समाप्त हो गया है। पिछले कुछ वर्षों में आर्थिक विकास के कारण देश को तकनीकी क्षेत्र में नयी प्रतिभा की आवश्यकता का अनुभव हुआ। कम्प्यूटर के आगमन से तो एक प्रकार की क्रान्ति ही घटित हो गई, आज रोजगार के अवसर भी पहले की अपेक्षा कई गुना अधिक हो गए हैं। उद्योग और प्रबन्धन के क्षेत्रों में कुशल और प्रशिक्षित व्यक्तियों की मांग इतनी बढ़ गई है कि भारतीय ही नहीं विदेशी कंपनियाँ भी प्रशिक्षण पूरा होने से पूर्व ही योग्य और प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को अपने संस्थान के लिए चुन लेती हैं। ऐसे योग्य छात्रों को मिलनेवाला आर्थिक पुरस्कार भी आकर्षक होता जा रहा है। इसका यह अभिप्राय नहीं है कि हमारी शिक्षा प्रणाली पूर्णत: वैज्ञानिक या दोषहीन हो गयी है। कहा जाता है कि आज का युग भूमंडलीकरण का युग है। उपभोक्ता संस्कृति ने शिक्षा को भी बाजार की वस्तु बना दिया है। वह एक सामग्री बनकर खरीदी और बेची जा रही है। भारतीयता का लोप हो रहा है। और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पश्चिम का अनुकरण किया जा रहा है। अनुकरण बुरा नहीं है किन्तु अन्धानुकरण घातक है।

अंग्रेजी बोलना शिक्षित होने का प्रमाण बन गया है। दूर दर्शन के हिन्दी चैनल खिचड़ी भाषा परोसकर एक नई भाषा को जन्म दे रहे हैं। हमारी अपनी भाषा और संस्कृति की स्वच्छता और विकास के लिए यह प्रवृति कितनी कल्याणकारी अथवा हानिकारक है, यह विचारणीय विषय बनता जा रहा है।

जायसी के पद्मावत में हीरामन तोते ने कहा था–

पण्डित होई सोहाट न चढ़ा। गया बिकाय भूलिगा पढ़ा।

हमें अपने आप से यह प्रश्न करना होगा कि आज 'पण्डित' क्या 'हाट' चढ़ गया है?

किसी समय व्यक्तित्व विकास को शिक्षा का उद्देश्य माना जाता था। आज उसी शिक्षा को सफल माना जाता है, जो नौकरी की गारन्टी दे सके। ऐसा भी नहीं है कि यह धारणा सर्वथा नवीन है। 'अर्थ करी च विद्या' के सिद्धान्त का उल्लेख हमारे पूर्वजों ने भी किया था। उसके भी पहले कहा गया था– सा विद्या या विमुक्तये,

वर्तमान उपयोगितावादी और भौतिकवादी युग में मोक्ष को शिक्षा का उद्देश्य सिद्ध करना असम्भव नहीं तो अव्यावहारिक अवश्य है। परन्तु यदि हम आध्यात्मिक मुक्ति की बात छोड़ दें तो क्या आप महसूस नहीं करते कि आज जाति, धर्म, भाषा की संकीर्णता से मुक्त होने की आवश्यकता है। कहने के लिए विज्ञान और तकनीक ने संसार को ग्राम में परिणत कर दिया है किन्तु जाति, धर्म, राष्ट्र के नाम पर आज भी संघर्ष हो रहे हैं और उसमें मनुष्य की बलि दी जा रही है। कबीर ने इसलिए पुस्तकीय ज्ञान को व्यर्थ घोषित किया था। आज सूचना तंत्र बहुत अधिक विकसित हो गया है। क्या उसी अनुपात में मनुष्य का हृदय भी विशाल एवं उदार हो सका है? भारत ने विश्व को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'वसुधैव' कुटुम्बकम् और तेन त्यक्तेन भुंजीथा' का सन्देश दिया था। परन्तु आज हम अपने पड़ोसी को भी सहन करने में असमर्थ हो रहे हैं। शिक्षा का एक उद्देश्य मानव निर्माण भी होना चाहिये। एक ऐसे मनुष्य का निर्माण जिसमें क्षमा, दया, मैत्री, करुणा, सहानुभूति आदि गुण विकसित हों, उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति यदि स्वार्थी, लोभी, अभिमानी और क्रूर हो तो अशिक्षित रहना ही मानवता के लिए कल्याणकारी होगा।

मानव निर्माण में शिक्षा की भूमिका को कैसे उपयोगी बनाया जाये, यह भी आज का एक विचारणीय प्रश्न है। चिन्ता का विषय है कि आज शिक्षा का बड़ी तेजी से उद्योगीकरण हो रहा है। हमारे देश में ऐसे शिक्षण संस्थान स्थापित हो रहे हैं जो प्रतिवर्ष लाखों रुपये शुल्क (Fees) के रूप में वसूल कर रहे हैं। ऐसी शिक्षा मनुष्य को वित्तोपार्जक अर्हता प्रदान करती है किन्तु उसमें मानवीय मूल्यों के प्रति सम्मान का भाव नहीं जगा पाती। समाचार पत्रों में प्राय: ऐसे समाचार पढ़ने को मिल जाते हैं कि पुत्र विदेश अथवा देश में ही किसी दूसरे नगर में बड़े पद पर है और माता या पिता अकेलेपन के कारण अवसाद ग्रस्त होकर आत्महत्या कर रहे हैं। आज शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य यही रह गया है कि हम अधिक से अधिक धन कमाने योग्य बन सकें। हमें यह स्मरण रखना होगा कि अर्थ स्वयं में साधन है, साध्य नहीं। अत: शिक्षा की भूमिका उन मूल्यों के रक्षण और पोषण में भी महत्वूर्ण है जो हमारे संबन्धों में आत्मीयता का अमृत प्रवाहित करता है। शिक्षा यदि हमारा सही मार्ग दर्शन नहीं कर सकी तो एक दिन हम गोस्वामी जी के समान यही अनुभव करेंगे–

डसित ही गई बीति निसा सब कबहुं न नाथ नींद भरि सोयो।

मैं मानता हूँ कि आज की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है, शिक्षा को औद्योगिकरण की लौह-शृंखला से मुक्त करना। बाजारवाद बहुत-सी दूसरी वस्तुओं के समान पश्चिम से आया है। और अपनी मानसिक ग्रंथि के कारण हम हर क्षेत्र में उसे ही अनुकरणीय मानते हैं। अज्ञेय ने सही कहा है–

अच्छी कुंठा रहित इकाई, सांचे ढले समाज से।
अच्छा अपना ठाट फकीरी मंगनी के सुखसाज से।

पूर्व प्राचार्य, श्री जैन विद्यालय, कोलकाता

■

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org